महर्षि वाल्मीकि रचित रामायण में सौंदर्यसृष्टि - एक झलक

अरुंधती सुधाकर जोशी – सरनाईक
Shree Samartha Vagdevata Mandir, Dhule
(pushkarsj@gmail.com)

ISBN: 978-1-7362088-2-3

महर्षि वाल्मिकी की महत्वपूर्ण विशेषताको देखें तो वह है " रामायण की सौंदर्यसृष्टि ।" निबंध सारांश में सौंदर्यसृष्टि के दो उदाहरण प्रस्तुत हैं । पहला उदाहरण हैं, कवि ने विविध व्यक्ति रेखाओं के लिये विशेष संबोधनोंका प्रयोग किया है । राम लक्ष्मण जब महर्षि विश्वामित्र के साथ जाते हैं तब मार्ग में प्रात:समय निद्रा से जगानेके लिये 'कौसल्यात्मज, रघुनंदन' ऐसे अनेक सुंदर संबोधनोंका प्रयोग करते हैं, जिससे ऋषी का वात्सल्य, कवि का पद लालित्य और भावनिक सौंदर्य का संगम होकर एक अनोखा चिरंतन सौंदर्य निर्माण हुआ है । द्वितीय उदाहरण है, रामचंद्रजी का वनवास निकलना । उस समय कुलगुरु वसिष्ठ कहते हैं "सीता पालयिष्यति मेदिनीम् ।" इसमें सीता का ज्ञान, राजकारणपटुत्व,वसिष्ठ की गुणग्राहकता आदि विशेषताएं प्रकट होती हैं ।

यावत् स्थास्यान्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति।।

जबतक इस पृथ्वीतल पर पर्वत और नदियाँ हैं तबतक (त्रि) लोक में तथा जनमानस में यह रामायण कथा प्रचार में रहेगी। प्रत्यक्ष रुप में ब्रह्माजी ने महर्षि वाल्मीकि जी को यह दिया हुआ आशिष आजतक सत्य प्रतीत हुआ है और भविष्य में भी वह सत्य ही रहनेवाला है। महर्षि वाल्मीकि जी और "नाट्यशास्त्र" इस ग्रंथ के रचयिता भरतमुनि जी प्रायः समकालिन होंगे। उसके कुछ प्रमाण अन्य साहित्यकृति यों में प्राप्त होते हैं। उदाहरण के रुप में महाकवि भवभूतिजी के 'उत्तररामचरित' यह नाटक, उसमें संदर्भ आता है कि, महर्षि वाल्मीकिजी जब रामायण लिख रहे थे उस समय जैसे जैसे काव्य लिखकर हो जाता था वैसे ही वे अपने शिष्य के हाथ में समीक्षा के लिये भरतमुनिजी के पास भेज देते थे।

"रामायण" महाकाव्य सत्य रूप से 'रत्नाकर' है। अगर विचार करे तो एक समय सागर के रत्न खत्म हो जायेंगे, लेकिन रामायण के रत्न, मौक्तिक, माणिक एवं सब कुछ.... कभी भी खत्म नहीं होंगे। जबतक "यावत् स्थास्यान्ति गिरयः....," तबतक। इस निबंध में उनमें से बहुत ही कम मात्रा में रत्न, माणिक दर्शाए जा रहे हैं। उसमें भी जो संदर्भ, कथानक एवं व्यक्तिचित्रण रूढ (प्रचलित) नहीं हैं उन्हें दिखाया गया है। रामायण के सौंदर्यसृष्टि का सौंदर्य झाँकने के लिये कुछ विभाग बनाये हैं। उनका विश्लेषण भी मर्यादित है।

रामायण इस महाकाव्य का प्रारंभ बहुत ही सुंदर एवं नाट्यमय है। एक बार महर्षि वाल्मीकि नारदमुनि जी से प्रश्न पूछते हैं –

"इस पृथ्वीतल पर सभी सद्गुणों से युक्त, सर्वगुणश्रेष्ठ, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवचनी एवं दृढनिश्चय का व्रत लिया हुआ ऐसा कोई है?" इस वर्णन के आगे सद्गुणों की लंबी कतार ही खड़ी होती है। इसपर नारदमुनि जी उत्तर देते हैं- 'अयोध्या का राजा राम'। और इस राजा राम का जीवन चरित्र चित्रित करनेवाला काव्य है- 'रामायण'।

रामायण के सौंदर्यसृष्टि का सौंदर्य परखने के लिये किये हुए कुछ विभाग-

1. प्रकृतिवर्णन

इसमें ऋतुओं का वर्णन हैं जैसे- वर्षाऋतु, शरदऋतु । चित्रकूट पर्वत, दंडकारण्य, गंगाधरावतरण, पंपा सरोवर आदि का भी प्रकृति वर्णन प्रस्तुत है । इस काव्य के प्रारंभ- आदिकांड में- पहले ही सर्ग में महर्षि वाल्मीकि जी का आश्रम तमसा नदीके तीरपर है ऐसा कहा गया है। उस नदी के तीर पर मुलायम सुवर्णमय बालुका है। इस नदी का पानी बिलकुल सज्जनों के मन की तरह है। यह दी गयी 'उपमा' बहुत ही सुंदर एवं औचित्यपूर्ण है । रामायण महाकाव्य ऐसे ही साहित्यिक विविध अलंकारों से सजा हुआ लगता है। इस काव्य में आए हुए अलंकार, किसी भी प्रकार का वर्णन, साहित्य का कौनसा भी घटक इनका जो सौंदर्य होता है वह दो प्रकार का होता है- 1) बाह्यसौंदर्य 2) आंतरिक सौंदर्य। साहित्य में संस्कृत के अनुरोध से काव्य के अलंकार काव्य के बाह्य सौंदर्य की शोभा बढाते है, क्यों कि उसमें शब्दचमत्कृति, उससे निर्माण होनेवाली अर्थचमत्कृति, पदलालित्य, लय, ताल आदि से सौंदर्य निर्मिती होती ही है। उसीप्रकार वाल्मीकि जी जैसे असाधारण प्रतिभासंपन्न कवि ऐसे अलंकारों की सहायता से काव्य के आंतरिक सौंदर्य बढाते हैं । उपर्युक्त उपमा से कवि ने 'प्रकृति एवं मानवी जीवन' इनके अटूट सानिध्य से आयी हुई एकरुपता का दर्शन कराया है । पहले सर्ग में कवि रामजी के गुणवर्णन में कहते हैं-

सभी शास्त्र, उनका तत्वार्थ जानने वाले, नीतिवान, प्रतिभासंपन्न, सज्जन, बलवान, बहुश्रुत, सज्जनों के मार्ग का अनुसरण करनेवाले आदि सभी सद्गुण प्रभु रामचंद्रजी के पास दौड़ते हैं जिस प्रकार सभी नदियाँ सागर की ओर दौड़्ती हैं। उपर्युक्त 'उत्प्रेक्षा' अलंकार ने राम की गुणलोलुपता, व्यक्तिरेखा का सौंदर्य और उन्नतता बढ़ाई है।

रामजी, लक्ष्मणजी तथा सीताजी जब वनवास निकलते हैं, उस समय उनके पीछे पीछे महाराज दशरथ, रानियाँ, राजपरिवार, मंत्रीगण तथा सभी प्रजाजन जाने लगते हैं उससमय कवि रामजी को 'चंद्रमा' की उपमा देते हैं। चंद्रमा के साथ जिस प्रकार उसकी आभा (तेज) चलती है उसी प्रकार रामजी के पीछे पीछे सभी जा रहे हैं। यहाँ रामजी को दी हुई चंद्रमा की उपमा 'सुंदर' तो है ही लेकिन इसमें से रामजी का चंद्रमा जैसा शीतल, आल्हाददायक, शांत स्वभाव सूचित होता है। सूचकता में ही सच्चा सौंदर्य होता है। "Curve is beauty" उसी प्रकार रामजी-लक्ष्मणजी-सीताजी और अन्य मानव इन सब का प्रकृति से जुड़ा हुआ अटूट नाता बहुत ही सुंदर है । महाराज दशरथजी इच्छा करते हैं कि-

"राम इस जगत् में मुझ से भी प्रिय हो, जैसे बरसता हुआ पर्जन्य"। यह अतीव सुंदर उपमा है।

ऐसे ही कवि ने अंतर्भूत किए हुए विविध काव्यालंकार अत्यंत औचित्यपूर्ण एवं अर्थवाही प्रकट होते हैं । रामजी-लक्ष्मणजी-सीताजी वनवास निकलते हैं। कुछ समय बाद वे दंडकारण्य में आते हैं उससमय ऋषि मुनिजन उनका 'विधिवत्' 'आदरातिथ्य' करते हैं। कवि इस काव्य में अनेक छोटी मोटी कृतियों के पीछे 'विधिवत्' इस शब्द का प्रयोग करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि, मनुष्य ने कौन सी भी कृति, वह छोटी हो या बडी उस कृति के नियम के अनुसार ही करनी चाहिए, तो ही वह खुद को तथा औरों को लाभदायी होती है । रामायण में इस प्रकार स्थल-काल की सीमा रेखा पार करके असंख्य कथाएँ चिरंजीव हुई हैं, वह जगत् के सामने आना आवश्यक है । भारतीय संस्कृति में अतिथि, अभ्यागत इनका आदरातिथ्य किया जाता है यह उसका वैशिष्ट्य है। ऐसे असंख्य उदाहरण इस काव्य में जगह जगह प्राप्त होते हैं । रामजी ने यहाँ ही रहना उचित होगा, यहाँ के वातावरण से उनका मन प्रसन्न होगा इसलिए ऋषिमुनि दंडकारण्य के परिसर का वहाँ के सुंदर प्रकृति का वर्णन भी सुंदर करते हैं। वे रामजी से कहते हैं-

"यह अतीव रमणीय स्थान है। यहाँ कंदमूल, फल, फूल, इन से शोभायमान अनेक वन हैं। बडे बडे शांत भाव के पक्षियों के असंख्य संघ हैं। यह वन मयूर जैसे सुंदर पक्षियों से तथा उनके केकारवों से संपन्न हैं"। (अरण्यकांड सर्ग 13)

रामजी 'पंचवटी परिसर' का वर्णन करते हुए लक्ष्मणजी से संवाद करते हैं, यह प्रदेश फूलों से लदे हुए वृक्षों से समृद्ध है। आप यहाँ ही आश्रम बाँध ले क्यों कि यहाँ की सौंदर्यश्री मन को लुभावनेवाली है। यहाँ पास में ही जलाशय है। 'कुश' घास भी यहाँ अमाप मात्रा में प्राप्त है। इस जलाशय में स्वर्गीय सुगंध एवं सौंदर्य से लदी हुई कमलवेलियाँ भी हैं। यहाँ हंस, कारंड, चक्रवाक पक्षियों की मधुर आवाज गुंजती है। यहाँ पास में ही हिरन तथा अन्य प्राणियों के झुंड भी हैं। यहाँ का वातावरण मयुरों की केकारवों से गुंजीत होता है। सुंदर सुंदर ऐसे ताम्रवर्ण धातु यहाँ बिखरे हुए हैं। यहाँ पास ही बलशाली हाथियों की बस्ती हैं। सभी ओर शालवृक्ष, उसपर गिरे हुए जलबिंदू, आम्रमंजिरियों से लदे हुए आम्रवृक्ष, अशोक के सुंदर वृक्ष, चंपक, केवडा इनके सुंदर गंधित वन आसपास हैं। अनेक पशु पक्षियों से संपन्न यह स्थान सही रुप में बहुत ही पुण्यमय एवं पुण्यप्रद है। बकुल वृक्षों पर फूलों के गुच्छे सजे हुए हैं इसलिये आप यहाँ ही पर्णकुटी बनाए।

रामजी को यह स्थान मन से भाता है इसलिए वे लक्ष्मणजी को यहाँ ही आश्रम (पर्णशाला) बाँधने को कहते हैं और लक्ष्मणजीने भी उनकी आज्ञा से वहाँ आश्रम बाँध ही लिया। इस वर्णन से रामजी के भावविभोर चित्तवृत्ति का उत्कट दर्शन होता है। महत्त्व की बात यह है कि काव्य में कथानक और वर्णन इनका संक्षेप एवं विस्तार कहाँ और कैसे करना है इसका यह उत्तम उदाहरण है। वैसे ही कवि ने समरसतापूर्ण इस स्थान का वर्णन किया है।

इसके सिवा इस काव्य में अनेक सुंदर सुंदर प्रकृति वर्णन हैं। इसमें प्रकृति एवं मानवी जीवन इनकी एकरूपता होती है तो मानवी जीवन सुखी और समृद्ध होता है ऐसे वर्णन यहाँ मिलते हैं। ऐसी ही बातें इन वर्णनों को चिरंजीव बनाती है, यही तो शाश्वत सौंदर्य है।

कवि ने रामजी के चरित्र समतुल्य रावण का चरित्र साकार किया है। ऐसे करने से रामजी के सामर्थ्य और पराक्रम की गरिमा अधिक बढ़ जाती है। रावण सीताहरण के लिये जाते समय जो प्रवास वर्णन है, सच रुप में देखे तो वह केवल दो ही श्लोकों में किया गया है। लंका से दंडकारण्य अंतर रावण ने बहुत ही कम समय में काट लिया इसमें उसके मन की सीता प्राप्ती की पराकोटी की तीव्र इच्छा ही कवि ने सूचित की है।

रावण और मारीच हवाईजहाज जैसे रथ में चढ़ते है और बड़ी गति से रामजी के आश्रम की ओर निकलते हैं, रास्ते में जो नदियाँ, पर्वत, वन, सरोवर, नगर आदियों को पार करके दंडकारण्य पहुँचे। रावण मारिच को कहते हैं, "अरे कर्दली के वन से गढ़ा हुआ यह आश्रम राम का ही होगा। यह स्थान अनेक पक्षियों के समूह से शोभायमान हैं, पशु-प्राणियों का आश्रयस्थान हैं, फूलों की बहार से सजे हुए वृक्ष हैं"। ऐसा यह स्थान है।

कवि प्रकृति वर्णन का एक भी मौका नहीं छोडते। कवि का यही प्रकृति प्रेम उनके मन की विशुद्धता दर्शाता है, और इससे काव्य का सौंदर्य अधिक खुल जाता है। 'रथ के नीचे उतरने के बाद रावण मारिच का हाथ, हाथ में लेकर कहता है- 'इस वाक्य से कवि ने रावण को हुआ आनंद, मारीच के बारे में प्रेम और कृतज्ञता दर्शायी है। इसप्रकार यहाँ प्राकृतिक सौंदर्य और भावनिक सौंदर्य इनका सुंदर सम्मिलन हुआ है। (अरण्यकांड सर्ग- 54)

लंका नगरी, रावण का महल, अशोकवन इन वर्णनों से रावण की समृद्धि तथा सौंदर्यदृष्टि दिखाई देती है। लेकिन कवि की समदृष्टि प्रकर्ष से ज्ञात होती है। नायक हो या खलनायक उनके किसी भी संदर्भ का वर्णन कवि जितनी समरसता के साथ करते हैं, वह उनकी समदृष्टि हैं।

अरण्यकांड के अंत में रामजी तथा लक्ष्मणजी शबरी के आश्रम में आते हैं। वहाँ शबरी के गुरु मतंगऋषि रहते हैं, इसलिए वह वन 'मतंगवन' इस नाम से पहचाना जाता है। इस वन के परिसर का शबरी ने अद्भूत वर्णन किया है और सही रुप में फिर से कवि द्वारा अद्भूत रस का परिपोष हुआ है। रामजी पंपा सरोवर एवं उसके परिसर का जो वर्णन लक्ष्मणजी को बताते हैं वह वर्णन भी अप्रतिम है। (अरण्यकांड सर्ग- 89,90)

2. प्रसंगों का चित्रण

कवि की असाधारण प्रतिभा से इस काव्य के प्रसंग तो सुंदर है ही, लेकिन वे सजीव भी बन गए हैं। उनकी शाब्दिक कला बहुत ही असाधारण है, मानो शब्दचित्र ही साकार हुए है। जैसे की, रामजी के यौराज्याभिषेक के पूर्व की सिद्धता, उसके बाद बना हुआ परिवर्तन, यज्ञवर्णन, शूर्पणखा भेंट, अहिल्या उद्धार, शबरी उद्धार, कबंध का उद्धार, खर- राम युद्ध, अयोध्या वर्णन एवं लंकानगरी का वर्णन आदि...

- **खर- राम युद्ध-**

खर यह रावण का भाई एवं उनकी बहन है शूर्पणखा, उसे लक्ष्मणजी ने विद्रूप बनाने के बाद खर ने अपनी चौदह शक्तियों को मूर्त रुप देकर अर्थात राक्षस बनाकर तथा चौदह हजार सैन्य साथ देकर रामजी के साथ युद्ध करने के लिए भेज दिया। इस समय खर की वाणी से बीभत्स रस क प्रपात हो रहा है। लेकिन मन के बीभत्स विचारों का वर्णन उतनी ही परिणामकारकता एवं संयमित रीति से किया हुआ है। प्रारंभ में काव्यरस आठ ही बताए गए थे। लेकिन इन सभी रसों का परिपोष काव्य में होना चाहिए ऐसा संकेत शायद यहाँ से ही शुरु हुआ होगा। वीर, अद्भूत, बीभत्स, भयानक ऐसे रसों का युद्धप्रसंग में कवि ने अत्यंत ओजस्विता से वर्णन किया हुआ है।

खर के रथ का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं- "वह रथ मेरु पर्वत के शिखर (चोटी) के आकार का था। उसका वर्ण तप्त सुवर्ण जैसा लाल था। वह रथ पूर्णत: सोने से बनाया हुआ, वैदूर्य आदि रत्नों तथा पर्वत के वृक्षों के फूलों से सजाया हुआ, चंद्र- सूर्य के किरणों जैसा तेजस्वी वर्ण का, मंगलमय जैसे पक्षियों के आकार चित्रित तथा नक्षत्रों जैसा शोभायमान था। फडk हुआ ध्वज, शस्त्रों से खचाखच भरा हुआ, घुंगरमालांओं से सजाया हुआ, बलवान एवं उन्मत्त घोडे बँधे हुए रथ पर खर विराजमान हुआ था। उसका सैन्य क्रौर्य की सभी सीमाएँ पार करके नगर बस्तियों से जा रहा था। लोहे के हथियार- मुद्गर, भाले, तेजधार परसु, धनुष्य, असंख्य बाण, गदाएँ, बडी बडी मुसलें ऐसे भयंकर शस्त्रों से खर का रथ संपन्न था।"

कवि ने किए हुए राक्षस सैन्य का वर्णन यथार्थ तथा अद्भूत एवं भयानक रसों का परिपोष करने वाला है, उस में कवि ने जो सौंदर्य निर्मिती की है वह सही रुप में अप्रतिम है। उसी प्रकार रामजी के सामने जो चुनौतियाँ थी वह उतनी ही कठिन एवं बलवान थी इसलिये तो रामजी का पराक्रम अजरामर हुआ है, ऐसा प्रतीत होता है।

खर जब विजय की अभिलाषा से उन्मत्त हुआ निकला था तब बड़े बड़े बादलों से रक्तमिश्रित जल का वर्षाव हो रहा था जैसे कि शरीर पर रोंगटे खडे हो। उस रथ के आसपास रक्त की नदियाँ बह रही थी। उसमें वह रथ अस्त को जानेवाले सूरज जैसा प्रतीत हो रहा था। यहाँ कवि ने सूर्य के लिए 'दिवाकर' इस शब्द का प्रयोजन करके खर का अस्त नजदिक ही आया हुआ है यह सूचित किया है। आगे रामजी लक्ष्मणजी को कहते हैं,- "हे शूरवीर लक्ष्मण, अभी यह अपवादात्मक स्थिति उत्पन्न हुई है, हे धनुर्धारी लक्ष्मण, आप वैदेही सीताजी को लेकर इस पर्वत के अत्यंत कठिन गुफा में प्रवेश करें, उनकी सुरक्षितता महत्त्वपूर्ण है, मैं जो यह बात कर रहा हूँ वह आपकी शूरता पर कोई भी संदेह लेने के लिए नहीं है।"

प्राचीन काल से ही युद्ध के प्रसंग में महिला, बालक- बालिका, वृद्ध इनकी सुरक्षितता को प्राधान्य दिया जाता है। ऐसे आदर्श, शाश्वत मूल्य, चिरंतन तत्त्वरुपी रत्न- माणिकों का इस काव्य में जगह-जगह प्रमाण मिलता है। खर जैसे महापराक्रमी, अद्भूत तथा चौदह हजार राक्षस सैन्य के प्रतिकार में रामजी केवल अकेले ही हैं। लेकिन उस घनघोर युद्ध के अंधकार में अचानक प्रभू राम माध्याह्न के सूर्य जैसे प्रखर तेजोपमान होने लगे है। यह उपमा अतिशय सुंदर है।

- **यज्ञवर्णन-**

रामजी के यौवराज्याभिषेक की सिद्धता के वर्णन में कवि ने भारतीय संस्कृति की 'प्रेयस एवं श्रेयस' इस अतिशय सुंदर, प्रभावी और मनुष्य को मानव बनानेवाली जुडवी संकल्पना अत्यंत कलात्मकतासे गुंफित की है ।

महाराजा दशरथजी की यह इच्छा थी अपने एवं प्रजाजनों के 'प्रेयस एवं श्रेयस' उचित समय तथा एक ही साथ प्राप्त हो इसलिए वे अपने ज्येष्ठ सुपुत्र के यौवराज्याभिषेक की जल्दी कर रहे थे। (अयोध्याकांड सर्ग 3)

प्रेयस- लौकिक कल्याण- गृह-द्वार, धन-संपत्ति, पुत्र-दारा, यश-कीर्ति आदि ।

श्रेयस- आत्मिक कल्याण, पारमार्थिक कल्याण ।

यह दोनों भी संकल्पनाएँ सापेक्ष हैं।

महाराज दशरथजी एक बार वसंतऋतु के समय ऋष्यशृंग ऋषिजी को कहते हैं- 'पुत्र की कामना हेतु मुझे यज्ञ करने की इच्छा है और उसका 'होतृपद' आप स्वीकार करें ऐसा मुझे लगता है।

महाराज दशरथजी का यह यज्ञ एक वर्ष बाद आए हुए वसंत ऋतु में प्रमुख रुप से शुरु हुआ। इस उत्सव में किन किनको आमंत्रित करना है इसका यथोचित वर्णन है। इसमें तत्कालिन सामाजिक स्थिति के अनुसार चार वर्णों को, प्राधान्यत: शूद्रों को भी आदरभाव से आमंत्रित करना चाहिए ऐसा कहा गया है। मतलब यह है की प्राचीन काल में भी शूद्रों के साथ सम्मानपूर्वक वर्तन किया जाता था ऐसा स्पष्ट होता है। देश विदेश के ज्ञानीजन, राजा महाराजा तथा अन्य सम्मानित महानुभाव इनका आदरपूर्वक सम्मान करें तथा उनके निवास और खानपान की व्यवस्था भी उचित करें ऐसी सूचनाएँ दी गई हैं। मतलब सभी के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया जाता था।

मुख्य यज्ञभूमि, शरयू नदी के उत्तर तीर पर तैयार की थी। उसका उद्देश्य यह था कि अयोध्या के प्रजाजनों के दिनक्रम में कोई बाधा न आए। यह विचार कितना चिरंतन और शाश्वत है! यह विचार आज भी चिंतनीय है।

इस यज्ञकालमें सभी जन अपने अपने कर्तव्य में तत्पर थे। कोई भूख- प्यास से व्याकुल नहीं था। अनाथ, सनाथ, श्रद्धालू, तपस्वी, बाल, वृद्ध, भूखे-गरीब, दीनदुबले, सभी जन भोजन का आस्वाद लेते थे, कोई भी अतृप्त नहीं रहता था। वहाँ 'प्रसाद दीजिए, भोजन कीजिए' ऐसे ही शब्द सुनाई देते थे। सभी इच्छाएँ पूर्ण करनेवाले, अत्यंत स्वादिष्ट, रुचकर, तृप्ती देनेवाले अन्नपदार्थ भरपूर मात्रा में (पर्वत के आकार इतने) पकाये जाते थे।

यह यज्ञवर्णन कवि प्रतिभा का अतुलनीय आविष्कार है। यज्ञ के प्रसंगों का, उनके उचित समय का तथा राजवैभव का सुरेख शब्दचित्र कविने चित्रित किया है। इस वर्णन में कमाल का वेग है, आवेग है। आलस्य एवं हिचकिचाहट के लिए कहीं अवसर ही नहीं है। इस काव्य में मन को समाधान देकर तृप्त करनेवाले अनेक यज्ञवर्णन आते हैं। कारण यह है कि प्राचीन काल में भारतीय समाज में, संस्कृति में जीवन के केंद्रस्थान पर यज्ञसंस्था थी। महाकाव्य में ऐसे सुंदर, प्रसंगोचित कथा परिपोषक वर्णन न केवल महाकाव्य का सौंदर्य वृद्धिंगत करते है बल्कि ये महाकाव्य का वैभव ही हैं।

यज्ञों का ऐसा अध्ययन करते हुए यह प्रतीत होता है कि, यह केवल वर्तमान काल में कालबाह्य हुए यज्ञ वर्णन नहीं है तो एक 'व्यवस्थापन शास्त्र'- Science of management है। कौनसे भी कार्य, उसका उचित नियोजन और प्रत्यक्ष कृति का यह यज्ञ वर्णन उत्तम उदाहरण है। इस दृष्टि से केवल यज्ञविचार करनेवाले ब्राह्मणग्रंथों का महत्त्व आज भी कम नहीं होता। उससे भी महत्त्व की बात यह है कि इन सब के मूल में 'विनय' यह चिरंतन विचार है। ऐसा कहा जाता है 'विद्या विनयेन शोभते' लेकिन 'सर्वं विनयेन शोभते' ऐसा कहना अधिक उचित होगा।

यज्ञ की दीक्षा, व्रत, नियम, शुद्धाचरण आदि शाश्वत संकल्पनाएँ इस वर्णन का और एक वैशिष्ट्य है। इन संकल्पनाओं से मनुष्य के आचरण में अनुशासनबद्धता, त्याग, सत्संकल्प, क्रमबद्धता इन गुणों की आदत होती हैं।

दान किन किन को देना चाहिए इसका महत्त्व यहाँ बताया गया है। गरीब, अंध, दरिद्री, अपंग, जिनकी पत्नी नहीं है, सैनिकों की विधवाएँ, वृद्ध, जिनके बालक छोटे हैं उन्हें, जो बीमारी से अत्यंत क्षीण हुए हैं, ऐसे परिजनों को दान देना चाहिए, इसमें समाज के सभी स्तरों का विचार किया गया है यह चिंतन महत्त्वपूर्ण है।

3. व्यक्तिरेखाओं का सौंदर्य

इस काव्य में निम्नलिखित रुप से व्यक्तिरेखाओं का वर्णन प्राप्त होता है-

इस काव्य के नायक राम हैं- 'रमयते इति रामः'। जो रममाण कराते है वह राम हैं। वे त्रैलोक्य के सद्गुणों का सागर हैं। जिसप्रकार सभी नदियाँ सागर की ओर दौडती है उसीप्रकार सभी सद्गुण मूर्त, साकार होने के लिए और उनका (रामजी का) आश्रय प्राप्त करने के लिए उनकी ओर दौडते हैं। इस सुंदर उपमा से राम के व्यक्तित्व की महानता एवं गहराई व्यक्त होती है। रामजी चंद्रमा जैसे शीतल हैं लेकिन कोई कठिन प्रसंग आने पर मगर-मच्छ जैसे भयंकर भी हैं। उनका कायिक सौंदर्य तो असीम है ही लेकिन आंतरिक सौंदर्य उससे भी अधिक है। वे एक पत्नी, एक वचनी, एक बाणी हैं तथा वे संपूर्ण हैं।

रामजी पर एक आक्षेप लिया जाता है कि, उसने एक धोबी की आशंका से सीताजी का त्याग किया, यह उचित नहीं है। लेकिन रामजी के व्यक्तिरेखा का समग्रता से विचार करे तो वे 'दृढव्रती' है। उन्होने लोकाराधन प्रजा का केवल समाधान हो यही व्रत लिया है और स्पष्ट है कि वे अपने जीवन में कितना भी महान त्याग कर सकते हैं। सीताजी के त्याग का यही तो उत्तर है।

कवि ने रामजी एवं सभी के लिए समय समय पर उपयोजित किए हुए विशेषण, संबोधन अतीव सुंदर, समर्पक, सूचक, अर्थवाही ऐसे हैं। उदाहरण के रूप में रामजी के लिए रघुकुलभूषण, रघुनंदन, कौसल्यात्मज, वीर धर्मज्ञ, महात्मा आदि।

देखा जाए तो रामजी धीरोदात्त, धीरगंभीर, धीरललित, धीरशांत ऐसे उदात्त एवं उन्नत गुणों से शोभायमान हैं। उसीप्रकार उन्होंने चलाया हुआ राज्य 'रामराज्य' है। रामराज्य का मतलब जिस राज्य में प्रजा सुख, समाधान, समृद्ध, आरोग्यसंपन्न तथा भयरहित जीवनयापन करती है।

रामजी एक मानव भी है इसकी झलक कवि ने अत्यंत कुशलतासे प्रकट की है। इससे उनकी व्यक्तिरेखा अधिक जीवित तथा मानव जैसी उभर आयी है। बनवास के प्रारंभ में राम- लक्ष्मणजी का संवाद होता है, उससमय रामजी पिताजी को 'कामलोलुप' कहते हैं। उसी प्रकार भरतजी के बारे

में भी उनके मन में सूक्ष्म असूया व्यक्त होते हुए दिखाई देती है। कैकेयी माता अपनी माताओं को कष्ट देगी इसलिए रामजी लक्ष्मणजी को फिर से अयोध्या जाने के लिए कहते हैं। (अयोध्याकांड सर्ग- 55)

रामजी का पिताजी के बारे में नाराज हैं, चित्रकूट पर्वत पर भरतभेंट के समय पिताजी को वे केवल 'राजा' का संबोधन करते हैं। (अयोध्याकांड सर्ग- 70)

कवि रामजी को 'धर्मात्मा' एवं भरतजी को 'धर्मवत्सल' इन विशेषणों का प्रयोग करते हैं। इसमें कविने जैसे की धर्मतत्त्व का द्वंद्व ही दिखाया है। लेकिन धर्म की आत्मा प्रभु रामजी ही सही रूप में 'धर्म का मर्म' जानते हैं।

ज्ञानी और चतुर आदमी ने इसमें से उचित मार्ग चुनना चाहिए क्यों कि इसके आदर्श प्रभु रामजी हैं, इसलिए यह काव्य आदर्श काव्य है। (अयोध्याकांड सर्ग- 75)

- **रामायण की अन्य पुरुष व्यक्तिरेखाएँ**

महाराज दशरथ, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, कुलगुरु महर्षि वसिष्ठ, महर्षि विश्वामित्र, रावण, बिभीषण, हनुमान आदि रामायण की अन्य पुरुष व्यक्तिरेखाएँ हैं। इन सभी व्यक्तिरेखाओं को विकसित करने में कवि कमाल के यशस्वी हुए हैं। विशेषता यह लगती है कि एक बार व्यक्तिरेखा को बडी करने की भावना में दूसरी व्यक्तिरेखा को छोटा बनाना यह निंदनीय मानसिकता कहीं भी नहीं दिखाई देती। उदाहरण अगर देखे तो महर्षि वसिष्ठ और विश्वामित्र इनका युद्ध। विश्वमित्रजी के दोष दिखाए हैं लेकिन बडी खुबीसे, एक स्थानपर उन्हें केवल 'राजा' करके ही संबोधित किया है।

महाराज दशरथजी रामजी को वन में जाने की अनुमति देते हैं। उनकी इस कृतिपर उन्हें स्त्री कामुकता के दूषण दिए जाते हैं, 'लेकिन दिए हुए वचन का पालन ही करना है' इस रघुकुल की रीत को निभाने के लिए कैकेयी को दिए हुए वचनों का पालन करना यह स्पष्ट होता है। रघुकुल को कलंक न लगे इसलिए राम के वियोग का अपार दुःख सहकर, प्राण त्याग की कीमत अदाकर महाराज दशरथजी ने रामजी को वन की अनुज्ञा दी। इसी ही धागे को बराबर पकडकर तुलसीदासजी ने अपने शब्दों को उज्ज्वल किया है- 'रघुकुल रीत सदा चली आई, प्राण जाए पर वचन न जाई...'।

खलनायक की दृष्टिसे रावण, खर, विचार मारीच, संशयी धोबी आदि व्यक्तिरेखाएँ भी कवि ने बडी प्रभावता से साकार की है।

- **रामायण की स्त्री व्यक्तिरेखाएँ-**

रामायण की स्त्री व्यक्तिरेखाओं का विचार करते समय यह ज्ञात होता है कि, कवि की प्रतिभा- पुरुषप्रधान संस्कृति, उसमें से स्त्री-पुरुष, उच्च- नीचता, प्रधानता- दुय्यमता इनके भेदाभेदों को भेदकर आगे चली गई है। कवि केवल इन दोनों को न देखकर संपूर्ण कथानक की ओर एक विशेष समदृष्टि से देखते हैं। इसी कारण से सीताजी की नायिका करके व्यक्तिरेखा रामजी के इतनी ही प्रभावी तथा अविस्मरणीय हुई हैं।

उनकी भूमिकाएँ देखिए- जनक कन्या, दशरथस्नुषा करके एक पतिव्रता, वनवासी, रावणने भगाके लेने के बाद एक हतबला, अबला, अभागिनी, हनुमानजी की भेंट में स्वाभिमानी, तेजस्विनी और अंत में परित्यक्ता आदि। आयु के पूरे स्थित्यंतरों में और स्थित्यंतर के बाद भी मानवी मन में घर कर जाती है। एक तेज से तेजोयमान लेकिन बाकियों को कोई भी दाह न देकर सभी को सुखद प्रकाश देनेवाली चिरंजीविनी अग्निशिखा। ऐसी सीताजी आदर्श नायिका तो है ही सिवाय वह भारतीय संस्कृति की आदर्श नारी का प्रतिनिधित्त्व करती है। राजमहल में वह जितनी रममाण होती है उतनी ही वनवास में भी रममाण होती है।

रामजी वनवास जब निकलते हैं तब कुलगुरु वसिष्ठजी कहते हैं-

"राम वनवास गये तो भी भरत के लिए राज्य किसलिये? राम की धर्मपत्नि सीताजी राज्य संभालेगी"। सीताजी को यह राज्य संभालने कि लिए जो भी शिक्षा आवश्यक थी वह पुरी शिक्षा उनको अवगत थी, इसलिए तो वसिष्ठजी कहते हैं- "सीता पालयिष्यति मेदिनीम्"।

इस राज्य का विस्तार याने संपूर्ण पृथ्वी यह कवि केवल 'मेदिनी'- पृथ्वी यह एक शब्द प्रयोग करते हैं। कवि की यह आशयघनता, अर्थघनता 'लक्षणा' इस शब्दशक्ति से सूचित होती है। और इससे भी महत्त्व की बात है कि महर्षि वसिष्ठजी कहते हैं- 'महाराज के साथ कैकेयी ने भी वन में जाना ये स्पष्ट है। मानो रामजी को वन में भेजने की सजा ही वे जैसे कैकेयी को दे रहे हैं।

कविने अपनी प्रतिभा के सुंदर सुंदर प्रकाश किरणों से काव्य की सौंदर्यसृष्टि उजागर की है।

सीताजी ने मानो एक सामान्य स्त्री का शरीर धारण किया होगा इसलिए मानव का अविवेक ही उनमें प्रविष्ट हुआ और वह सुवर्णमृग के मोह में पड़ी। उन्हें मृगचर्म की मृदु शय्या बनानी थी।

सीताजी को रामजी की नकली आवाज भी पहचान में नहीं आती। लक्ष्मणजी रामजी के मदद के लिए नहीं जा रहे हैं इसलिए उनकी निर्भत्सना करना इतना ही नहीं तो लक्ष्मणजी के हेतु के बारे में आशंकित होना, बाद में रावण के बोलने में झट से फँसना, उसके सामने अपने ससुरजी की अवहेलना करना आदि बातें सीताजी के अविवेक की होगी ऐसा कहना पडेगा।

"अहल्या द्रौपदी सीता, तारा मंदोदरी तथा।
पञ्चकन्यां स्मरेन्नित्यं, महापातकनाशनम्॥

इस श्लोक में द्रौपदी यह पात्र महाभारत का है अन्य चारों रामायण के हैं। एक अहल्या को छोडकर चारों में भी एक समान सूत्र मिलता है, उन्होंने अपने पतियों के गलत कदमों को सँवारने के अनंत प्रयास किए, उनमें उन्हें यशस्विता प्राप्त हुई या नहीं यह बात अलग है और इनके इन्हीं गुणों के कारण वे अजरामर हुई है।

- **रामायण की अन्य स्त्री व्यक्तिरेखाएँ-**

राममाता कौसल्या, लक्ष्मणमाता सुमित्रा, भरत एवं शत्रृघ्न की माता कैकेयी ये सभी माताएँ मूल की राजकन्याएँ होते हुए सुविद्य हैं। कैकेयी युद्ध कुशल भी है। कैकेयी का असाधारण सौंदर्य और युद्ध कौशल्य को देखकर ही महाराज दशरथजी ने उनके साथ विवाह किया। कौसल्या महारानी थी तो कैकेयी पट्टरानी थी। सुमित्रा सीधी साधी, शांत स्वभाव की और भोली भाली रानी थी। कैकेयी के क्रोध एवं द्वेष का अन्य जगह पर भी दर्शन होता है।

मंथरा की बातोंमें आकर ही क्यों न हो, कैकेयी भरत के लिए राज्य और राम के लिए चौदह साल का वनवास देना सोचती है, ऐसा क्यों? तो रामजी ने एक बार वल्कल धारण किए तो वे हिंसा नहीं कर पायेंगे। जंगल के हिंस्र पशू, राक्षस उनका काम तमाम कर देंगे और फिर अपने लड़के का (भरतजी) राज्य निष्कंटक होगा यह विचार मंथरा उनके मन में डालती है। मंथरा के मन में कैकेयी का हित आना स्वाभाविक है क्यों कि वह उसके मायके की दासी है। लेकिन प्रश्न यह खड़ा होता है कि उसे रामजी का इतना गुस्सा क्यों? तो कवि ने निम्नलिखित इसका उत्तर स्पष्ट किया है।
कैकेयी के मन के भावतरंग हल्के से और कुशलतासे दिखाए हैं। रामजी के यौवराज्याभिषेक की तैय्यारी के समय मंथरा स्वेच्छा से महल के छत पर जाती है। स्वेच्छा से इस शब्द से उसका राजमहल में महत्त्वपूर्ण स्थान सूचित होता है। यह रामजी का प्रतिशोध लेने का एक बड़ा अच्छा मौका है इसका उसे भान होता है। एक बार रामजी ने मंथरा को अपराधवश सात दिन राजमहल के बाहर रहने की सजा दी थी, इसका ही प्रतिशोध समझकर वह रामजी को चौदह दिन का नहीं तो चौदह साल का वनवास हो ऐसा चाहती है। (अयोध्याकांड सर्ग- 9)
कवि हर एक घटना में कार्यकारण देते हुए दिखाई देते हैं। उससे उनकी कोई भी बात अस्पष्ट है ऐसा नहीं लगता। यह बात काव्य का सौंदर्य वृद्धिंगत करती है।

इसके सिवाय भौगोलिक, सामाजिक, खगोलशास्त्रीय, अध्यात्मिक, राजकीय, तांत्रिक ऐसे अनेकानेक संदर्भ और मुद्दे इस काव्य में हैं।
उपर्युक्त रामायण काव्य के सौंदर्यसृष्टि का अध्ययन करने के बाद मेरी स्थिति ऐसी हुई है जैसे-

अनंत हस्ते कमलावर से।
दे रहे हो कितना ले लूं दो कर से।।

इस निबंध में मैंने ज्यादातर जनमानस में रामायण की प्रचलित या रूढ़ कथाएँ जो हैं उनको छोडकर अन्य कथाएँ, मुद्दे और संदर्भ लेने का प्रयास किया है।

रामायण की अतीव सुंदर सौंदर्यसृष्टि की झलक दिखाने का मैंने प्रयत्न किया है।

इसमें ऋतुओं का वर्णन हैं जैसे- वर्षाऋतु, शरदऋतु । चित्रकूट पर्वत, दंडकारण्य, गंगाधरावतरण, पंपा सरोवर आदि का भी प्रकृति वर्णन प्रस्तुत है । इस काव्य के प्रारंभ- आदिकांड में- पहले ही सर्ग में महर्षि वाल्मीकि

4. संदर्भ ग्रंथ

1. श्री समर्थ रामदास स्वामी जी लिखित महर्षि वाल्मीकि रामायण